अध्याय

7

11093CH07

भू-आकृतियाँ तथा उनका विकास

पृथ्वी के धरातल का निर्माण करने वाले पदार्थों पर अपक्षय की प्रक्रिया के पश्चात् भू-आकृतिक कारक जैसे- प्रवाहित जल, भूमिगत जल, वायु, हिमनद तथा तरंग अपरदन करते हैं। आप यह जानते ही हैं कि अपरदन धरातलीय स्वरूप को बदल देता है। निक्षेपण प्रक्रिया अपरदन प्रक्रिया का परिणाम है और निक्षेपण से भी धरातलीय स्वरूप में परिवर्तन आता है।

चूँकि, यह अध्याय भू-आकृतियों तथा उनके विकास से संबंधित है, अतः सबसे पहले यह जानें कि भू-आकृति क्या है? साधारण शब्दों में छोटे से मध्यम आकार के भूखंड भू-आकृति कहलाते हैं।

अगर पृथ्वी के छोटे से मध्यम आकार के स्थलखंड को भू-आकृति कहते हैं तो *भूदृश्य* क्या है?

बहुत सी संबंधित भू-आकृतियाँ मिलकर भूदृश्य बनाती हैं, जो भूतल के विस्तृत भाग हैं। प्रत्येक भू-आकृति की अपनी भौतिक आकृति, आकार व पदार्थ होते हैं जो कि कुछ भू-प्रक्रियाओं एवं उनके कारकों द्वारा निर्मित हैं। अधिकतर भू-आकृतिक प्रक्रियाएँ धीमी गति से कार्य करती हैं और इसी कारण उनके आकार बनने में लंबा समय लगता है। प्रत्येक भू-आकृति का एक प्रारंभ होता है। भू-आकृतियों के एक बार बनने के बाद उनके आकार, आकृति व प्रकृति में बदलाव आता है जो भू-आकृतिक प्रक्रियाओं व कार्यकर्त्ताओं के लगातार धीमे अथवा तेज गति के कारण होता है।

जलवायु संबंधी बदलाव तथा वायुराशियों के ऊर्ध्वाधर अथवा क्षैतिज संचलन के कारण, भू-आकृतिक प्रक्रियाओं की गहनता से या स्वयं ये प्रक्रियाएँ स्वयं परिवर्तित हो जाती हैं जिनसे भू-आकृतियाँ रूपांतरित होती हैं। विकास का यहाँ अर्थ भूतल के एक भाग में एक भू-आकृति का दूसरी भू-आकृति में या एक भू-आकृति के एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित होने की अवस्थाओं से है। इसका अभिप्राय यह है कि प्रत्येक भू-आकृति के विकास का एक इतिहास है और समय के साथ उसका परिवर्तन हुआ है। एक स्थलरूप विकास की अवस्थाओं से गुजरता है जिसकी तुलना जीवन की अवस्थाओं -युवावस्था, प्रौढ़ावस्था तथा वृद्धावस्था से की जा सकती है।

भू-आकृतियों के विकास के दो महत्त्वपूर्ण पहलू क्या हैं?

प्रवाहित जल

आर्द्र प्रदेशों में, जहाँ अत्यधिक वर्षा होती है, प्रवाहित जल सबसे महत्त्वपूर्ण भू-आकृतिक कारक है जो धरातल का निम्नीकरण के लिए उत्तरदायी है। प्रवाहित जल के दो तत्त्व हैं। एक, धरातल पर परत के रूप में फैला हुआ प्रवाह है। दूसरा, रैखिक प्रवाह है जो घाटियों में नदियों, सरिताओं के रूप में बहता है। प्रवाहित जल द्वारा निर्मित अधिकतर अपरदित स्थलरूप ढाल प्रवणता के अनुरूप बहती हुई नदियों की आक्रामक युवावस्था से संबंधित हैं। कालांतर में, तेज ढाल लगातार अपरदन के कारण मंद ढाल में परिवर्तित हो जाते हैं और परिणामस्वरूप नदियों का वेग कम हो जाता है, जिससे निक्षेपण आरंभ होता है। तेज ढाल से बहती हुई सरिताएँ भी कुछ निक्षेपित भू-आकृतियाँ बनाती हैं, लेकिन ये

नदियों के मध्यम तथा धीमे ढाल पर बने आकारों की अपेक्षा बहुत कम होते हैं। प्रवाहित जल का ढाल जितना मंद होगा, उतना ही अधिक निक्षेपण होगा। जब लगातार अपरदन के कारण नदी तल समतल हो जाए, तो अधोमुखी कटाव कम हो जाता है और तटों का पार्श्व अपरदन बढ़ जाता है और इसके फलस्वरूप पहाड़ियाँ और घाटियाँ समतल मैदानों में परिवर्तित हो जाते है।

क्या ऊँचे स्थलरूपों के उच्चावच का संपूर्ण निम्नीकरण संभव है?

स्थलगत प्रवाह (Overland flow) परत अपरदन का कारण है। परत प्रवाह धरातल की अनियमितताओं के आधार पर संकीर्ण व विस्तृत मार्गों पर हो सकता है। प्रवाहित जल के घर्षण के कारण बहते हुए जल द्वारा कम या अधिक मात्रा में बहाकर लाए गए तलछटों के कारण छोटी व तंग क्षुद्र सरिताएँ बनती हैं। ये क्षुद्र सरिताएँ धीरे-धीरे लंबी व विस्तृत अवनालिकाओं में विकसित होती हैं। इन अवनलिकाओं कालांतर में, अधिक गहरी, चौड़ी तथा लंबाई में विस्तृत होकर एक दूसरे में समाहित होकर घाटियों का जाल बनाती हैं। प्रारंभिक अवस्थाओं में अधोमुखी कटाव अधिक होता है जिससे अनियमितताएँ जैसे- जलप्रपात व सोपानी जलप्रपात आदि लुप्त हो जाते हैं। मध्यावस्था में, सरिताएँ नदी तल में धीमा कटाव करती हैं और घाटियों में पार्श्व अपरदन अधिक होता है। कालांतर में, घाटियों के किनारों की ढाल मंद होती जाती है। इसी प्रकार अपवाह बेसिन के मध्य विभाजक तब तक निम्न होते जाते हैं, जब तक ये पूर्णत: समतल नहीं हो जाते; और अंतत: एक धीमे उच्चावच का निर्माण होता है जिसमें यत्र-तत्र अवरोधी चट्टानों के अवशेष दिखाई देते हैं जिन्हें *मोनाडनोक* (Monadanox) कहते हैं। नदी अपरदन के द्वारा बने इस प्रकार के मैदान, समप्राय मैदान या *पेनीप्लेन* (Peneplain) कहलाते हैं। प्रवाहित जल से निर्मित प्रत्येक अवस्था की स्थलरूप संबंधी विशेषताओं का संक्षिप्त वर्णन निम्न प्रकार है:

युवावस्था (Youth)

इस अवस्था में नदियों की संख्या बहुत कम होती है ये नदियाँ उथली V-आकार की घाटी बनाती हैं जिनमें बाढ़ के मैदान लगभग अनुपस्थित या संकरें बाढ़ मैदान मुख्य नदी के साथ-साथ पाए जाते हैं। जल विभाजक अत्यधिक विस्तृत (चौड़े) व समतल होते हैं, जिनमें दलदल व झीलें होती हैं। इन ऊँचे समतल धरातल पर नदी विसर्प विकसित हो जाते हैं। ये विसर्प अंतत: ऊँचे धरातलों में गभीरभूत हो जाते हैं (अर्थात् विसर्प की तली में निम्न कटाव होता है और ये गहराई में बढ़ते हैं)। जहाँ अनावरित कठोर चट्टानें पाई जाती है। वहाँ जलप्रपात व क्षिप्रिकाएँ बन जाते है।

प्रौढ़ावस्था (Mature)

इस अवस्था में नदियों में जल की मात्रा अधिक होती है और सहायक नदियाँ भी इसमें आकर मिलती हैं। नदी घाटियाँ V-आकार की होती हैं लेकिन गहरी होती हैं। मुख्य नदी के व्यापक और विस्तृत होने से विस्तृत बाढ़ के मैदान पाए जाते हैं जिसमें घाटी के भीतर ही नदी विसर्प बनाती हुई प्रवाहित होती है। युवावस्था में निर्मित समतल, विस्तृत व अंतर नदीय दलदली क्षेत्र लुप्त हो जाते हैं और नदी विभाजक स्पष्ट होते हैं। जलप्रपात व क्षिप्रिकाएँ लुप्त हो जाती हैं।

वृद्धावस्था (Old)

वृद्धावस्था में छोटी सहायक नदियाँ कम होती हैं और ढाल मंद होता है। नदियाँ स्वतंत्र रूप से विस्तृत बाढ़ के मैदानों में बहती हुई नदी विसर्प, प्राकृतिक तटबंध, गोखुर झील आदि बनाती हैं। विभाजक विस्तृत तथा समतल होते हैं जिनमें झील, दलदल पाये जाते हैं। अधिकतर भूदृश्य समुद्रतल के बराबर या थोड़े ऊँचे होते हैं।

अपरदित स्थलरूप

घाटियाँ

घाटियों का प्रारंभ तंग व छोटी-छोटी क्षुद्र सरिताओं से होता है। ये क्षुद्र सरिताएँ धीरे-धीरे लंबी व विस्तृत

अवनलिकाओं में विकसित हो जाती हैं। ये अवनालिकाएँ धीरे-धीरे और गहरी हो जाती हैं; ये चौड़ी व लंबी होकर घाटियों का रूप धारण करती हैं। लम्बाई, चौड़ाई एवं आकृति के आधार पर ये घाटियाँ - **V-आकार घाटी, गॉर्ज, कैनियन** आदि में वर्गीकृत की जा सकती हैं। गॉर्ज एक गहरी संकरी घाटी है जिसके दोनों पार्श्व तीव्र ढाल के होते हैं (चित्र 7.1)। एक कैनियन के किनारे भी खड़ी ढाल वाले होते हैं और यह भी गॉर्ज की ही भाँति गहरी होती है (चित्र 7.2)। गॉर्ज की चौड़ाई इसके तल व ऊपरी भाग में लगभग एक समान होती है। इसके विपरीत, एक कैनियन तल की अपेक्षा ऊपरी भाग अधिक चौड़ा होता है। वास्तव में कैनियन, गॉर्ज का ही एक दूसरा रूप है। चट्टानों के प्रकार और संरचना पर घाटी का प्रकार निर्भर होता है। उदाहरणार्थ कैनियन का निर्माण प्रायः अवसादी चट्टानों के क्षैतिज स्तरण में पाए जाने से होता है तथा गॉर्ज कठोर चट्टानों में बनता है।

चित्र 7.1 : होगेनेकल (धर्मपुरी, तमिलनाडु) के समीप गॉर्ज के रूप में कावेरी नदी की घाटी

चित्र 7.2 : संयुक्त राज्य अमेरिका में कोलोरेडो का गभीरीभूत विसर्प लूप, जो इसकी घाटी के कैनियन जैसे सोपान सदृश्य पार्श्वीय ढाल दर्शाता है।

जलगर्तिका तथा अवनमित कुंड (Potholes and plunge pools)

पहाड़ी क्षेत्रों में नदी तल में अपरदित छोटे चट्टानी टुकड़े छोटे गर्त्तों में फंसकर वृत्ताकार रूप में घूमते हैं जिन्हें *जलगर्तिका* कहते हैं। एक बार छोटे व उथले गर्तों के बन जाने पर कंकड़, पत्थर व गोलाश्म इन गर्तों में एकत्रित हो जाते हैं और प्रवाहित जल के साथ घूमते हैं और धीरे-धीरे इन गर्तों का आकार बढ़ता जाता है। यह गर्त आपस में मिल जाते हैं और कालांतर में नदी-घाटी गहरी होती जाती है। जलप्रपात के तल में भी एक गहरे व बड़े जलगर्तिका का निर्माण होता है जो जल के ऊँचाई से गिरने व उनमें शिलाखंडों के वृत्ताकार घूमने से निर्मित होते हैं। जलप्रपातों के तल में ऐसे विशाल व गहरे कुंड *अवनमित कुंड* (Plunge pools) कहलाते हैं।

अधःकर्तित विसर्प या गभीरीभूत विसर्प (Incised or Entrenched Meanders)

तीव्र ढालों में तीव्रता से बहती हुई नदियाँ सामान्यतः नदी तल पर अपरदन करती हैं। तीव्र नदी ढालों में भी पार्श्व अपरदन अधिक नहीं होता लेकिन मंद ढालों पर बहती हुई नदियाँ अधिक पार्श्व अपरदन करती हैं।

क्षैतिज अपरदन अधिक होने के कारण, मंद ढालों पर बहती हुई नदियाँ वक्रित होकर बहती हैं या नदी विसर्प बनाती हैं। नदी विसर्पों का बाढ़ मैदानों और डेल्टा मैदानों पर पाया जाना एक सामान्य बात है क्योंकि यहाँ नदी का ढाल बहुत मंद होता है। कठोर चट्टानों में भी गहरे कटे हुए और विस्तृत विसर्प मिलते हैं। इन विसर्पों को *अध:कर्तित विसर्प या गभीरभूत विसर्प* कहा जाता है (चित्र 7.2)।

नदी वेदिकाएँ (River terraces)

नदी वेदिकाएँ प्रारंभिक बाढ़ मैदानों या पुरानी नदी घाटियों के तलों के चिह्न हैं। ये जलोढ़ रहित मूलाधार चट्टानों के धरातल या नदियों के तल हैं जो निक्षेपित जलोढ़ वेदिकाओं के रूप में पाए जाते हैं। नदी वेदिकाएँ मुख्यत: अपरदित स्थलरूप हैं क्योंकि ये नदी निक्षेपित बाढ़ मैदानों के लंबवत् अपरदन से निर्मित होते हैं। विभिन्न ऊँचाइयों पर कई वेदिकाएँ हो सकती हैं जो आरंभिक नदी जल स्तर को दर्शाते हैं। नदी वेदिकाएँ नदी के दोनों तरफ समान ऊँचाई वाली हो सकती हैं और इनके इस स्वरूप को *युग्म (Paired) वेदिकाएँ* कहते हैं।

निक्षेपित स्थलरूप

जलोढ़ पंख

जब नदी उच्च स्थलों से बहती हुई गिरिपद व मंद ढाल के मैदानों में प्रवेश करती है तो जलोढ़ पंख का निर्माण होता है (चित्र 7.3)। साधारणतया पर्वतीय क्षेत्रों में बहने वाली नदियाँ भारी व स्थूल आकार के नद्य-भार को वहन करती हैं। मंद ढालों पर नदियाँ यह भार वहन करने में असमर्थ होती हैं तो यह शंकु के आकार में निक्षेपित हो जाता है जिसे जलोढ़ पंख कहते हैं। जो नदियाँ जलोढ़ पंखों से बहती हैं, वे प्राय: अपने वास्तविक वाह-मार्ग को बहुत दूर तक नहीं बहतीं बल्कि अपना मार्ग बदल लेती हैं और कई शाखाओं में बँट जाती हैं जिन्हें *जलवितरिकाएँ* (Distributaries) कहते हैं। आर्द्र प्रदेशों में जलोढ़ पंख प्राय: निम्न शंकु की आकृति तथा शीर्ष से पाद तक मंद ढाल वाले होते हैं। शुष्क व अर्द्ध-शुष्क जलवायवी प्रदेशों में ये तीव्र ढाल वाले व उच्च शंकु बनाते हैं।

चित्र 7.3 : अमरनाथ, जम्मू तथा कश्मीर के मार्ग में एक पहाड़ी सरिता द्वारा निक्षेपित जलोढ़ पंख

डेल्टा

डेल्टा जलोढ़ पंखों की ही भाँति होते हैं, लेकिन इनके विकसित होने का स्थान भिन्न होता है। नदी अपने लाये हुए पदार्थों को समुद्र में किनारे बिखेर देती हैं। अगर यह भार समुद्र में दूर तक नहीं ले जाया गया हो तो यह तट के साथ ही शंकु के रूप में एक साथ फैल जाता है। जलोढ़ पंखों के विपरीत, डेल्टा का निक्षेप व्यवस्थित होता है और इनका जलोढ़ स्तरित होता है। अर्थात् मोटे पदार्थ तट के निकट व बारीक कण जैसे - चीका मिट्टी, गाद आदि सागर में दूर तक जमा हो जाता है। जैसे-जैसे डेल्टा का आकार बढ़ता है, नदी वितरिकाओं की लंबाई बढ़ती जाती है और डेल्टा सागर के अंदर तक बढ़ता रहता है (चित्र 7.4)।

चित्र 7.4 : कृष्णा नदी डेल्टा (आंध्र प्रदेश) के भाग का उपग्रह द्वारा लिया गया एक चित्र

बाढ़-मैदान, प्राकृतिक तटबंध तथा विसर्पी रोधिका

जिस प्रकार अपरदन से घाटियाँ बनती हैं, उसी प्रकार निक्षेपण से बाढ़ के मैदान विकसित होते हैं। बाढ़ के मैदान नदी निक्षेपण के मुख्य स्थलरूप हैं। जब नदी तीव्र ढाल से मंद ढाल में प्रवेश करती है तो बड़े आकार के पदार्थ पहले ही निक्षेपित हो जाते हैं। इसी प्रकार बारीक पदार्थ जैसे रेत, चीका मिट्टी और गाद आदि अपेक्षाकृत मंद ढालों पर बहने वाली कम वेग वाली जल धाराओं में मिलते हैं और जब बाढ़ आने पर पानी तटों पर फैलता है तो ये उस तल पर जमा हो जाते हैं। नदी निक्षेप से बने ऐसे तल सक्रिय *बाढ़ के मैदान* कहलाते हैं। तलों से ऊँचाई पर बने तटों को असक्रिय बाढ़ के मैदान कहते हैं। असक्रिय बाढ़ के मैदान, जो तटों के ऊपर (ऊँचाई) होते हैं, मुख्यत: दो प्रकार के निक्षेपों से बने होते हैं- बाढ़ निक्षेप व सरिता निक्षेप। मैदानी भागों में नदियाँ प्राय: क्षैतिज दिशा में अपना मार्ग बदलती हैं और कटा हुआ मार्ग धीरे-धीरे भर जाता है। बाढ़ मैदानों के ऐसे क्षेत्र, जो नदियों के कटे हुए या छूटे हुए भाग हैं; उनमें स्थूल पदार्थों के जमाव होते हैं। ऐसे जमाव, जो बाढ़ के पानी के फैलने से बनते हैं अपेक्षाकृत महीन कणों- चिकनी मिट्टी, गाद आदि के होते हैं। ऐसे बाढ़ मैदान, जो डेल्टाओं में बनते हैं, उन्हें **डेल्टा मैदान** कहते हैं।

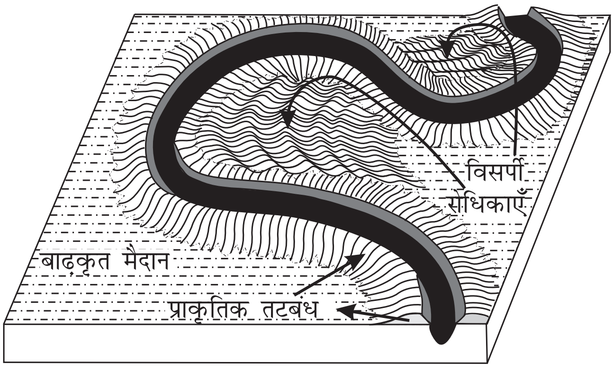

चित्र 7.5 : प्राकृतिक तटबंध एवं विसर्पी रोधिकाओं का चित्रण

प्राकृतिक तटबंध और विसर्पी रोधिका आदि कुछ महत्त्वपूर्ण स्थलरूप हैं जो बाढ़ के मैदानों से संबंधित हैं। प्राकृतिक तटबंध बड़ी नदियों के किनारे पर पाए जाते हैं। ये तटबंध नदियों के पार्श्वों में स्थूल पदार्थों के रैखिक, निम्न व समानांतर कटक के रूप में पाये जाते हैं, जो कई स्थानों पर कटे हुए होते हैं। नदी रोधिकाएँ (Point bars) या विसर्पी रोधिकाएँ (Meander bars), बड़ी नदी विसर्पों के अवतल ढालों पर पाई जाती हैं और ये रोधिकाएँ प्रवाहित जल द्वारा लाए गए तलछटों के नदी किनारों पर निक्षेपण के कारण बनी हैं। इनकी चौड़ाई व परिच्छेदिका लगभग एक समान होती है और इनके अवसाद मिश्रित आकार के होते हैं।

> प्राकृतिक तटबंध विसर्प अवरोधिकाओं से कैसे भिन्न हैं?

नदी विसर्प (Meanders)

विस्तृत बाढ़ व डेल्टा मैदानों में नदियाँ शायद ही सीधे मार्गों में बहती होंगी। बाढ़ व डेल्टाई मैदानों पर लूप जैसे चैनल प्रारूप विकसित होते हैं – जिन्हें *विसर्प* कहा जाता है। (चित्र 7.6) विसर्प एक स्थलरूप न होकर एक प्रकार का चैनल प्रारूप है। नदी विसर्प के निर्मित होने के कारण निम्नलिखित हैं: (i) मंद ढाल पर बहते जल में तटों पर क्षैतिज या पार्श्विक कटाव करने की प्रवृत्ति का होना (ii) तटों पर जलोढ़ का अनियमित व असंगठित जमाव जिससे जल के दबाव का नदी पार्श्वों बढ़ना (iii) प्रवाहित जल का कोरिआलिस प्रभाव से विक्षेपण (ठीक उसी प्रकार जैसे कोरिआलिस बल से वायु प्रवाह विक्षेपित होता है)।

जब चैनल की ढाल प्रवणता अत्यधिक मंद हो जाती है तो नदी में पानी का प्रवाह धीमा हो जाता तथा पार्श्वों का कटाव अधिक होता है। नदी तटों पर थोड़ी सी अनियमितताएँ भी, धीरे-धीरे मोड़ों के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं। यह मोड़ नदी के अंदरूनी भाग में जलोढ़ जमाव के कारण गहरे हो जाते हैं और बाहरी किनारा अपरदित होता रहता है। अगर अपरदन, निक्षेपण तथा निम्न कटाव न हो तो विसर्प की प्रवृत्ति कम हो जाती है। प्राय: बड़ी नदियों के विसर्प में अवतल किनारों पर सक्रिय निक्षेपण होते हैं और उत्तल किनारों पर *अधोमुखी* (Undercutting) *कटाव* होते हैं। अवतल किनारे कटाव किनारों के रूप में भी जाने जाते हैं; जो अधिक अपरदन से *तीव्र कगार* (Steep cliff) के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। उत्तल किनारों का ढाल मंद होता है और विसर्पों के गहरे छल्ले के आकार में विकसित हो जाने पर

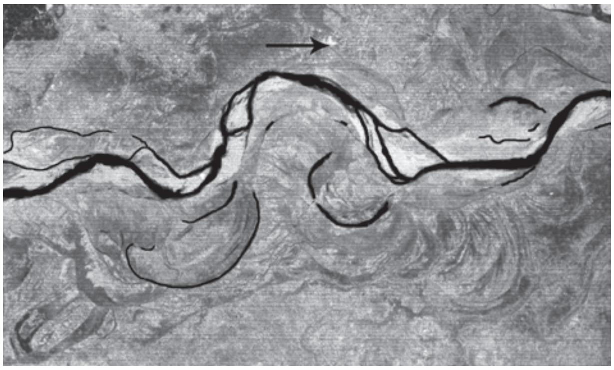

चित्र 7.6 : मुज़फ़्फ़रपुर, बिहार के समीप विसर्पी बूढ़ी गंडक नदी दर्शाने वाला उपग्रह से लिया गया चित्र जिसमें कई छाड़न झीलें दिखाई दे रही हैं।

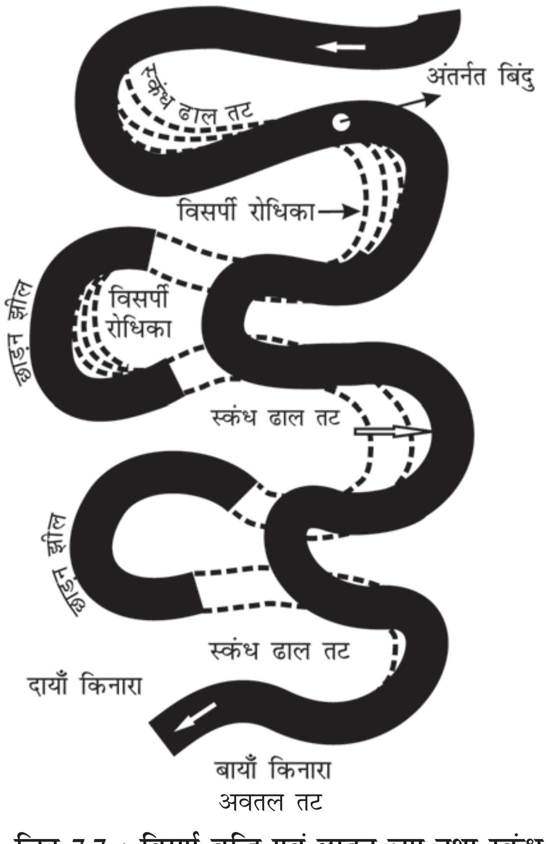

चित्र 7.7 : विसर्प वृद्धि एवं छाड़न लूप तथा स्कंध ढाल एवं अधोरदित तट

ये अंदरूनी भागों पर अपरदन के कारण कट जाते हैं और **गोखुर झील** (Ox-bow lake) बन जाती है।

भौम जल (GROUNDWATER)

भौम जल यहाँ एक संसाधन के रूप में वर्णित नहीं है। यहाँ भौम जल का अपरदन के कारक के रूप में और उसके द्वारा निर्मित स्थलरूपों का वर्णन किया गया है। जब चट्टानें पारगम्य, कम सघन, अत्यधिक जोड़ों/सन्धियों व दरारों वाली हों, तो धरातलीय जल का अन्तः स्रवण आसानी से होता है। लम्बवत् गहराई पर जाने के बाद जल धरातल के नीचे चट्टानों की संधियों, छिद्रों व संस्तरण तल से होकर क्षैतिज अवस्था में बहना प्रारंभ करता है। जल का यह क्षैतिज व ऊर्ध्वाधर प्रवाह ही चट्टानों के अपरदन का कारण है। भौम जल में पदार्थों के परिवहन द्वारा बने स्थलरूप महत्त्वहीन हैं। इसी कारण भूमिगत जल का कार्य सभी प्रकार की चट्टानों में नहीं देखा जा सकता। लेकिन ऐसी चट्टानें जैसे- चूना पत्थर या डोलोमाइट, जिनमें कैल्शियम कार्बोनेट की प्रधानता होती है, उनमें धरातलीय व भौम जल, रासायनिक प्रक्रिया द्वारा (घोलीकरण व अवक्षेपण) अनेक स्थल रूपों को विकसित करते हैं। ये दो प्रक्रियाएँ- घोलीकरण व अवक्षेपण- या तो चूना पत्थर व डोलामाइट चट्टानों में अलग से या अन्य चट्टानों के साथ अंतरासंस्तरित पाई जाती हैं। किसी भी चूनापत्थर (Limestone) या डोलोमाइट चट्टानों के क्षेत्र में भौम जल द्वारा घुलनप्रक्रिया और उसके निक्षेपण प्रक्रिया से बने ऐसे स्थलरूपों को *कार्स्ट* (Karst topography) *स्थलाकृति* का नाम दिया गया है। यह नाम एड्रियाटिक सागर के साथ बालकन कार्स्ट क्षेत्र में उपस्थित लाइमस्टोन चट्टानों पर विकसित स्थलाकृतियों पर आधारित है।

अपरदनात्मक तथा निक्षेपणात्मक- दोनों प्रकार के स्थलरूप कार्स्ट स्थलाकृतियों की विशेषताएँ हैं।

अपरदित स्थलरूप

कुंड (Pools), घोलरंध्र (Sinkholes), लैपीज (Lapies) और चूना-पत्थर चबूतरे (Limestone pavements)

चूना-पत्थर चट्टानों के तल पर घुलन क्रिया द्वारा छोटे व मध्यम आकार के छोटे घोल गर्तों का निर्माण होता है,

जिनके विलय पर इन्हें विलयन रंध्र (Swallow holes) कहते हैं। घोलरंध्र कार्स्ट क्षेत्रों में बहुतायत में पाए जाते हैं। घोल रंध्र एक प्रकार के छिद्र होते हैं जो ऊपर से वृत्ताकार व नीचे कीप की आकृति के होते हैं और इनका क्षेत्रीय विस्तार कुछ वर्ग मीटर से हैक्टेयर तक तथा गहराई आधा मीटर से 30 मीटर या उससे अधिक होती है। इनमें से कुछ का निर्माण अकेले घुलन प्रक्रिया द्वारा ही होता है और कुछ अन्य पहले घुलन प्रक्रिया द्वारा बनते हैं और अगर इन घोलरंध्रों के नीचे बनी कंदराओं की छत ध्वस्त हो जाए तो ये बड़े छिद्र *ध्वस्त या निपात रंध्र* (Collapse sinks) के नाम से जाने जाते हैं। अधिकतर घोलरंध्र ऊपर से अपरदित पदार्थों के जमने से ढ़क जाते हैं और उथले जल कुंड जैसे प्रतीत होते हैं।

ध्वस्त घोल रंध्रों को *डोलाइन* (Dolines) भी कहा जाता है। ध्वस्त रंध्रों की अपेक्षा घोलरंध्र अधिक संख्या में पाए जाते हैं। सामान्यत: धरातलीय प्रवाहित जल घोल रंध्रों व विलयन रंध्रों से गुजरता हुआ अन्तभौमि नदी के रूप में विलीन हो जाता है और फिर कुछ दूरी के पश्चात् किसी कंदरा से भूमिगत नदी के रूप में फिर निकल आता है। जब घोलरंध्र व डोलाइन इन कंदराओं की छत के गिरने से या पदार्थों के स्खलन द्वारा आपस में मिल जाते हैं, तो लंबी, तंग तथा विस्तृत खाइयाँ बनती हैं जिन्हें *घाटी रंध्र* (Valley sinks) या *युवाला* (Uvalas) कहते हैं। धीरे-धीरे चूनायुक्त चट्टानों के अधिकतर भाग इन गर्तों व खाइयों के हवाले हो जाता है और पूरे क्षेत्र में अत्यधिक अनियमित, पतले व नुकीले कटक आदि रह जाते हैं, जिन्हें *लेपीस* (Lapies) कहते हैं। इन कटकों या लेपीस का निर्माण चट्टानों की संधियों में भिन्न घुलन प्रक्रियाओं द्वारा होता है। कभी-कभी लेपीज़ के ये विस्तृत क्षेत्र समतल चूनायुक्त चबूतरों में परिवर्तित हो जाते हैं।

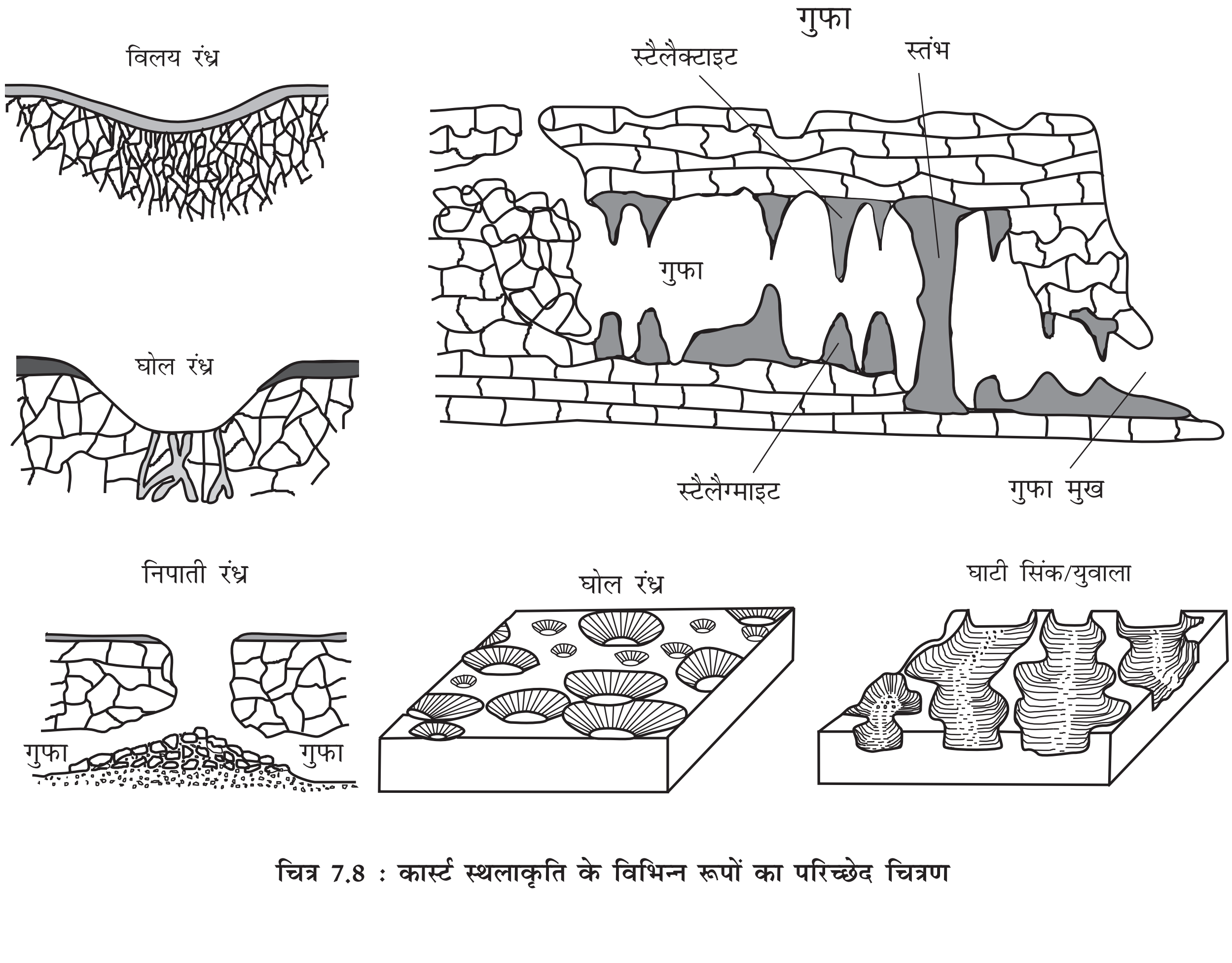

चित्र 7.8 : कार्स्ट स्थलाकृति के विभिन्न रूपों का परिच्छेद चित्रण

कंदराएँ (Caves)

ऐसे प्रदेश जहाँ चट्टानों के एकांतर संस्तर हों (शैल, बालू पत्थर व क्वार्टजाइट) और इनके बीच में अगर चूनापत्थर व डोलोमाइट चट्टानें हों या जहाँ सघन चूना-पत्थर चट्टानों के संस्तर हों, वहाँ प्रमुखतया कंदराओं का निर्माण होता है। पानी दरारों व संधियों से रिसकर शैल संस्तरण के साथ क्षैतिज अवस्था में बहता है। इसी तल संस्तरण के सहारे चूना चट्टानें घुलती हैं और लंबे एवं तंग विस्तृत रिक्त स्थान बनते हैं जिन्हें कंदराएँ कहा जाता है। कभी-कभी विभिन्न स्तरों पर कंदराओं का एक जाल सा बन जाता है जो चूना-पत्थर चट्टानों के तल व उनके बीच संस्तरित चट्टानों पर निर्भर है। प्राय: कंदराओं का एक खुला मुख होता है जिससे कंदरा सरिताएँ बाहर निकलती हैं। ऐसी कंदराएँ जिनके दोनों सिरे खुले हों, उन्हें सुरंग (Tunnels) कहते हैं।

निक्षेपित स्थलरूप

अधिकतर निक्षेपित स्थलरूप कंदराओं के भीतर ही निर्मित होते हैं। चूना पत्थर चट्टानों में मुख्य रसायन कैल्शियम कार्बोनेट है जो कार्बनयुक्त जल (वर्षा जल में घुला हुआ कार्बन) में शीघ्रता से घुल जाता है। जब इस जल का वाष्पीकरण होता है तो घुले हुए कैल्शियम कार्बोनेट का निक्षेपण हो जाता है या जब चट्टानों की छत से जल वाष्पीकरण के साथ कार्बन डाईआक्साइड गैस मुक्त हो जाती है तो कैल्शियम कार्बोनेट के चट्टानी धरातल पर टपकने से निक्षेपण हो जाता है।

स्टैलेक्टाइट, स्टैलेग्माइट और स्तंभ

स्टैलेक्टाइट विभिन्न मोटाइयों के लटकते हुए हिमस्तंभ जैसे होते हैं। प्राय: ये आधार पर या कंदरा की छत के पास मोटे होते हैं और अंत के छोर पर पतले होते जाते हैं। ये अनेक आकारों में दिखाई देते हैं। स्टैलेग्माइट कंदराओं के फर्श से ऊपर की तरफ बढ़ते हैं। वास्तव में स्टैलेग्माइट कंदराओं की छत से धरातल पर टपकने वाले चूनामिश्रित जल से बनते हैं या स्टेलेक्टाइट के ठीक नीचे पतले पाइप की आकृति में बनते हैं (चित्र 7.9)। स्टैलेग्माइट एक स्तंभ के एक चपटी तश्तरीनुमा आकार

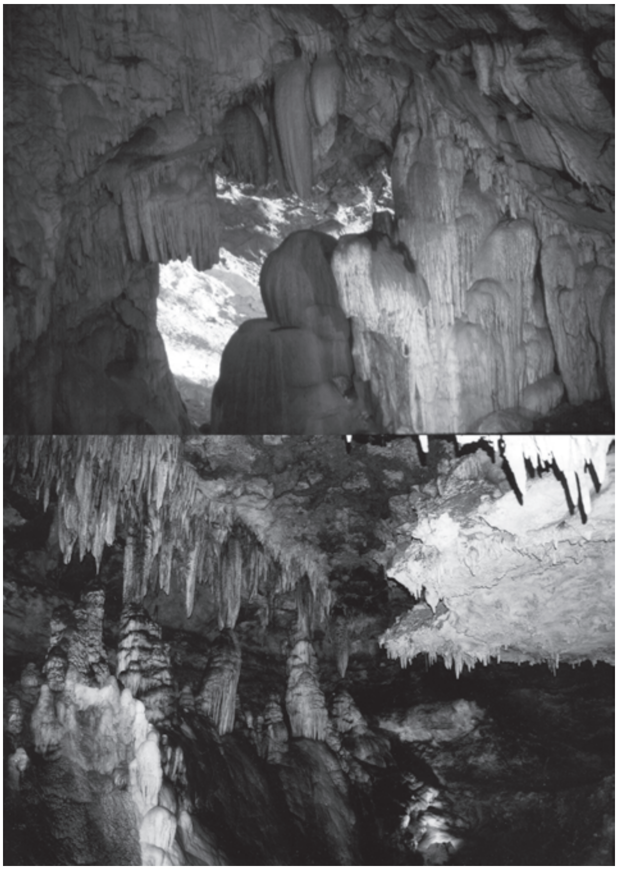

चित्र 7.9 : चूना पत्थर गुफा में स्टैलैक्टाइट एवं स्टैलेग्माइट

में या समतल अथवा क्रेटरनुमा गड्ढे के आकार में विकसित हो जाते हैं। विभिन्न मोटाई के स्टैलेग्माइट तथा स्टैलेक्टाइट के मिलने से स्तंभ और *कंदरा स्तंभ* बनते हैं।

> कार्स्ट प्रदेशों में कुछ अन्य अपेक्षाकृत छोटे स्थलरूप व आकृतियाँ भी पाई जाती हैं, जिन्हें स्थानीय नामों से पुकारा जाता है।

हिमनद

पृथ्वी पर परत के रूप में हिम प्रवाह या पर्वतीय ढालों से घाटियों में रैखिक प्रवाह के रूप में बहते हिम संहति को हिमनद कहते हैं। महाद्वीपीय हिमनद या गिरिपद हिमनद वे हिमनद हैं जो वृहत् समतल क्षेत्र पर हिम परत के रूप में फैले हों तथा पर्वतीय या घाटी हिमनद वे

हिमनद हैं जो पर्वतीय ढालों में बहते हैं (चित्र 7.10)। प्रवाहित जल के विपरीत हिमनद प्रवाह बहुत धीमा होता है। हिमनद प्रतिदिन कुछ सेंटीमीटर या इससे कम से लेकर कुछ मीटर तक प्रवाहित हो सकते हैं। हिमनद मुख्यत: गुरुत्वबल के कारण गतिमान होते हैं।

हमारे देश में भी अनेक हिमनद हैं जो हिमालय पर्वतीय ढालों से घाटी में बहते हैं। उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश और जम्मू कश्मीर के उच्च प्रदेशों में कुछ स्थानों पर इन्हें देखा जा सकता है। क्या आप जानते हैं कि भगीरथी नदी का उद्‌गम गंगोत्री हिमनद का अग्रभाग (गोमुख) है। वास्तव में अलकनंदा नदी का उद्‌गम अलकापुरी हिमनद से है। देवप्रयाग के निकट अलकनंदा व भगीरथी के मिलने पर यहाँ से इसे गंगा के नाम से जाना जाता है।

हिमनदों से प्रबल अपरदन होता है जिसका कारण इसके अपने भार से उत्पन्न घर्षण है। हिमनद द्वारा कर्षित चट्टानी पदार्थ (प्राय: बड़े गोलाश्म व शैलखंड) इसके तल में ही इसके साथ घसीटे जाते हैं या घाटी के किनारों पर अपघर्षण व घर्षण द्वारा अत्यधिक अपरदन करते हैं। हिमनद अपक्षय रहित चट्टानों का भी प्रभावशाली अपरदन करते हैं, जिससे ऊँचे पर्वत छोटी पहाड़ियों व मैदानों में परिवर्तित हो जाते हैं।

हिमनद के लगातार संचलित होने से हिमनद मलवा हटता होता है विभाजक नीचे हो जाता है और कालांतर में ढाल इतने निम्न हो जाते हैं कि हिमनद की संचलन शक्ति समाप्त हो जाती है तथा निम्न पहाड़ियों व अन्य निक्षेपित स्थलरूपों वाला एक *हिमानी धौत* (Outwash plain) रह जाता है। चित्र 7.11 तथा 7.12 हिमनद के अपरदन व निक्षेपण से निर्मित स्थलरूपों को दर्शाता है जिसका वर्णन भी अगले अनुच्छेदों में किया गया है।

चित्र 7.10 : घाटी में हिमनद

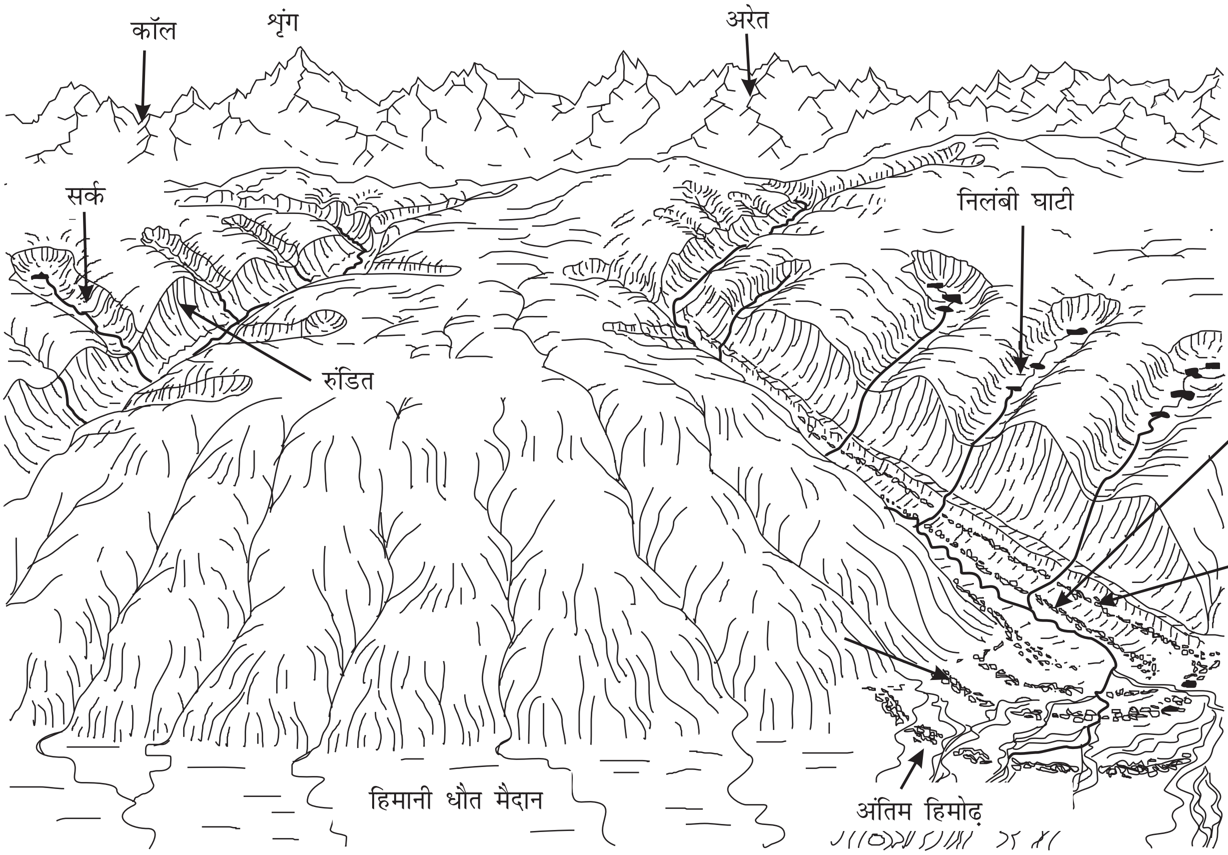

चित्र 7.11 : हिमनद द्वारा अपरदन एवं निक्षेपण के विभिन्न रूप (स्पेन्सर, 1962 से संकलित एवं संशोधित)

अपरदित स्थलरूप

सर्क

हिमानीकृत पर्वतीय भागों में हिमनद द्वारा उत्पन्न स्थलरंध्रों में सर्क सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। अधिकतर सर्क हिमनद घाटियों के शीर्ष पर पाए जाते हैं। एकत्रित हिम पर्वतीय क्षेत्रों से नीचे आती हुई सर्क को काटती है। *सर्क* गहरे, लंबे व चौड़े गर्त हैं जिनकी दीवार तीव्र ढाल वाली सीधी या अवतल होती है। हिमनद के पिघलने पर जल से भरी झील भी प्रायः इन गर्तों में देखने को मिलती है। इन झीलों को सर्क झील या *टार्न झील* कहते हैं। आपस में मिले हुए दो या दो से अधिक सर्क सीढ़ीनुमा क्रम में दिखाई देते हैं।

हॉर्न या गिरिश्रृंग और सिरेटेड कटक

सर्क के शीर्ष पर अपरदन होने से हॉर्न निर्मित होते हैं। यदि तीन या अधिक विकीर्णित हिमनद निरंतर शीर्ष पर तब-तक अपरदन जारी रखें जब तक उनके तल आपस में मिल जाएँ तो एक तीव्र किनारों वाली नुकीली चोटी का निर्माण होता है जिन्हें *हॉर्न* कहते हैं। लगातार अपदरन से सर्क के दोनों तरफ की दीवारें तंग हो जाती हैं और इसका आकार कंघी या आरी के समान कटकों के रूप में हो जाता है, जिन्हें *अरेत* (Ar'ets) (तीक्ष्ण कटक) कहते हैं। इनका ऊपरी भाग नुकीला तथा बाहरी आकार टेढ़ा-मेढ़ा होता है। इन कटकों का चढ़ना प्रायः असंभव होता है।

आल्प्स पर्वत पर सबसे ऊँची चोटी मैटरहॉर्न तथा हिमालय पर्वत की सबसे ऊँची चोटी एवरेस्ट, वास्तव में, हॉर्न है जो सर्क के शीर्ष अपदरन से निर्मित है।

हिमनद घाटी/गर्त

हिमानीकृत घाटियाँ गर्त की भाँति होती हैं जो आकार में अंग्रेजी के अक्षर U जैसी होती हैं; जिनके तल चौड़े व किनारे चिकने तथा ढाल तीव्र होते हैं। घाटी में मलबा बिखरा होता है अथवा हिमोढ़ मलबा दलदली रूप में दिखाई देता है। चट्टानी धरातल पर झील भी उभरी होती है अथवा ये झीलें घाटी में उपस्थित हिमोढ़ मलबे से बनती हैं। मुख्य घाटी के एक तरफ या दोनों तरफ ऊँचाई पर **लटकती घाटी** (Hanging valley) भी होती हैं। इन लटकती घाटियों के तल, जो मुख्य घाटी में खुलते हैं, इनके विभाजक क्षेत्रों के कट जाने से ये त्रिकोण रूप में नज़र आती हैं। बहुत गहरी हिमनद गर्तें जिनमें समुद्री जल भर जाता है तथा जो समुद्री तटरेखा पर होती हैं, उन्हें *फियोर्ड* कहते हैं।

नदी घाटियों तथा हिमनद घाटियों में आधारभूत अंतर क्या है?

निक्षेपित स्थलरूप

पिघलते हुए हिमनद के द्वारा मिश्रित रूप में भारी व महीन पदार्थों का निक्षेप-हिमोढ़ या हिमनद गोलाश्म के रूप में जाना जाता है। इन निक्षेप में अधिकतर चट्टानी टुकड़े नुकीले या कम नुकीले आकार के होते हैं। हिमनदों के तल, किनारों या छोर पर बर्फ पिघलने से सरिताएँ बनती हैं। कुछ मात्रा में शैल मलबा इस पिघले जल से बनी सरिता में प्रवाहित होकर निक्षेपित होता है। ऐसे हिमनदी-जलोढ़ निक्षेप हिमानी धौत (Outwash) कहलाते हैं। हिमोढ़ निक्षेप के विपरीत हिमानी धौत (Outwash deposits) प्रायः स्तरीकृत व वर्गीकृत होते हैं। हिमनद अपक्षेप में चट्टानी टुकड़े गोल किनारों वाले होते हैं। चित्र 7.12 में हिमनद क्षेत्रों के मुख्य निक्षेपित स्थलरूप दर्शाये गये हैं।

हिमोढ़

हिमोढ़, हिमनद टिल (Till) या गोलाश्मी मृत्तिका के जमाव की लंबी कटकें हैं। अंतस्थ हिमोढ़ (Terminal moraines) हिमनद के अंतिम भाग में मलबे के निक्षेप से बनी लंबी कटके हैं। पार्श्विक हिमोढ़ (Lateral moraincs) हिमनद घाटी की दीवार के समानांतर निर्मित होते हैं। पार्श्विक हिमोढ़ अंतस्थ हिमोढ़ से मिलकर घोड़े की नाल या अर्ध चंद्राकार कटक का निर्माण करते हैं (चित्र 7.12)। हिमनद घाटी के दोनों ओर अत्यधिक मात्रा में पार्श्विक हिमोढ़ पाए जाते हैं। इस हिमोढ़ की उत्पत्ति पूर्णतया आंशिक रूप से हिमानी-जल द्वारा होती है; जो इस जलोढ़ को हिमनद के किनारों पर धकेलती है। कुछ घाटी हिमनद तेजी से पिघलने पर घाटी तल पर हिमनद टिल को एक परत के रूप में अव्यवस्थित रूप से छोड़ देते हैं। ऐसे अव्यवस्थित व भिन्न मोटाई के निक्षेप तलीय या *तलस्थ* (Ground) *हिमोढ़* कहलाते हैं। घाटी के मध्य में पार्श्विक हिमोढ़ के साथ-साथ हिमोढ़ मिलते हैं जिन्हें मध्यस्थ (Medial) हिमोढ़ कहते हैं। ये पार्श्विक हिमोढ़ की अपेक्षा कम स्पष्ट होते हैं। कभी-कभी मध्यस्थ हिमोढ़ व तलस्थ के अंतर को पहचानना कठिन होता है।

एस्कर (Eskers)

ग्रीष्म ऋतु में हिमनद के पिघलने से जल हिमतल के ऊपर से प्रवाहित होता है अथवा इसके किनारों से रिसता है या बर्फ के छिद्रों से नीचे प्रवाहित होता है। यह जल हिमनद के नीचे एकत्रित होकर बर्फ के नीचे नदी धारा में प्रवाहित होता है। ऐसी नदियाँ नदी घाटी के ऊपर बर्फ के किनारों वाले तल में प्रवाहित होती हैं। यह जलधारा अपने साथ बड़े गोलाश्म, चट्टानी टुकड़े और छोटा चट्टानी मलबा मलबा बहाकर लाती है जो हिमनद के नीचे इस बर्फ की घाटी में जमा हो जाते हैं। ये बर्फ पिघलने के बाद एक वक्राकार कटक के रूप में मिलते हैं, जिन्हें *एस्कर* कहते हैं।

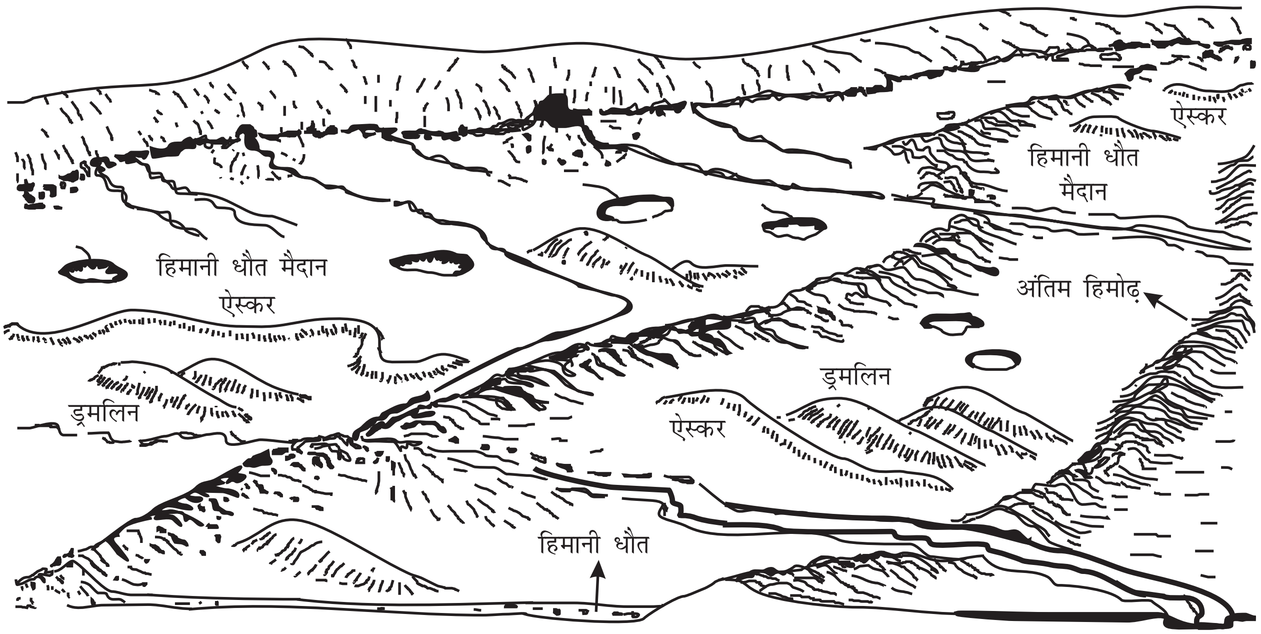

चित्र 7.12 : हिमनदीय स्थलाकृति के विभिन्न निक्षेपित भू-आकृतियों का सुंदर चित्रण (स्पेन्सर, 1962 से संकलित एवं संशोधित)

हिमानी धौत मैदान (Outwash plains)

हिमानी गिरिपद के मैदानों में अथवा महाद्वीपीय हिमनदों से दूर हिमानी-जलोढ़ निक्षेपों से (जिसमें बजरी, रेत, चीका मिट्टी व मृत्तिका के विस्तृत समतल जलोढ़-पंख भी शामिल हैं), हिमानी धौत मैदान निर्मित होते हैं।

नदी के जलोढ़ मैदान व हिमानी धौत मैदानों में अंतर स्पष्ट करें।

ड्रमलिन (Drumlins)

ड्रमलिन हिमनद मृत्तिका के अंडाकार समतल कटकनुमा स्थलरूप हैं जिसमें रेत व बजरी के ढेर होते हैं। ड्रमलिन के लंबे भाग हिमनद के प्रवाह की दिशा के समानांतर होते हैं। ये एक किलोमीटर लंबे व 30 मीटर तक ऊँचे होते हैं। ड्रमलिन का हिमनद सम्मुख भाग स्टॉस (Stoss) कहलाता है, जो पृच्छ (Tail) भागों की अपेक्षा तीखा तीव्र ढाल लिए होता है। ड्रमलिन का निर्माण हिमनद दरारों में भारी चट्टानी मलबे के भरने व उसके बर्फ के नीचे रहने से होता है। इसका अग्र भाग या स्टॉस भाग प्रवाहित हिमखंड के कारण तीव्र हो जाता है। ड्रमलिन हिमनद प्रवाह दिशा को बताते हैं।

गोलाश्मी मृत्तिका व जलोढ़ में क्या अन्तर है?

तरंग व धाराएँ

तटीय प्रक्रियाएँ सर्वाधिक क्रियाशील हैं और इसी कारण अत्यधिक विनाशकारी होती हैं। क्या आप नहीं सोचते कि तटीय प्रक्रियाओं तथा उनसे निर्मित स्थलरूपों को जानना अति महत्त्वपूर्ण है?

तट पर कुछ परिवर्तन बहुत शीघ्रता से होते हैं। एक ही स्थान पर एक मौसम में अपरदन व दूसरे मौसम में निक्षेपण हो सकता है। तटों के किनारों पर अधिकतर परिवर्तन तरंगों द्वारा संपन्न होते हैं। जब तरंगों का अवनमन होता है तो जल तट पर अत्यधिक दबाव डालता है और इसके साथ ही साथ सागरीय तल पर तलछटों में भी दोलन होता है। तरंगों के स्थायी अवनमन के प्रवाह से तटों पर अभूतपूर्व प्रवाह पड़ता है। सामान्य तरंग अवनमन की अपेक्षा सुनामी लहरें कम समय में अधिक परिवर्तन लाती हैं। तरंगों

में परिवर्तन (उनकी आवृति आदि) होने से उनके अवनमन से उत्पन्न प्रभाव की गहनता भी परिवर्तित हो जाती है।

क्या आप तरंग व धाराओं को उत्पन्न करने वाले बलों के विषय में जानते हैं? यदि नहीं तो महासागरीय जल का परिसंचरण, अध्याय पढ़ें।

तरंगों के कार्य के अतिरिक्त, तटीय स्थलरूप कुछ अन्य कारकों पर भी निर्भर हैं। ये हैं: (i) स्थल व समुद्री तल की बनावट, (ii) समुद्रोन्मुख उन्मग्न तट या जलमग्न तट। समुद्री जल स्तर को स्थिर या स्थायी मानते हुए, तटीय स्थलरूपों के विकास को समझने के लिए तटों को दो भागों में वर्गीकृत किया जाता है : (i) ऊँचे, चट्टानी तट (जलमग्न तट) (ii) निम्न, समतल व मंद ढाल के अवसादी तट (उन्मग्न तट)।

ऊँचे चट्टानी तट

ऊँचे चट्टानी तटों के सहारे तट रेखाएँ अनियमित होती हैं तथा नदियाँ जलमग्न प्रतीत होती हैं। तटरेखा का अत्यधिक अवनमन होने से किनारे के स्थल भाग जलमग्न हो जाते हैं और वहाँ फियोर्ड तट बनते हैं। पहाड़ी भाग सीधे जल में डूबे होते हैं। सागरीय किनारों पर प्रारंभिक निक्षेपित स्थलरूप नहीं होते। अपरदित स्थलरूपों की बहुतायत होती है।

ऊँचे चट्टानी तटों के सहारे तरंगें अवनमित होकर धरातल पर अत्यधिक बल के साथ प्रहार करती है जिससे पहाड़ी पार्श्व भृगु (Cliff) का आकार के लेते हैं। तरंगों के स्थायी प्रहार से भृगु शीघ्रता से पीछे हटते हैं और समुद्री भृगु (Cliff) के सम्मुख तरंग घर्षित चबूतरे बन जाते हैं तरंगें धीरे-धीरे सागरीय किनारों की अनियमितताओं को कम कर देती हैं।

समुद्री भृगु से गिरने वाला चट्टानी मलबा धीरे-धीरे छोटे टुकड़ों में टूट जाता है और लहरों के साथ घर्षित होता हुआ किनारों से दूर निक्षेपित हो जाता है। भृगु के विकास व उसके निवर्तन के वाँछनीय समय के बाद तट रेखा कुछ सम/चिकनी हो जाती है तथा कुछ अतिरिक्त मलबे के किनारों से दूर जमाव से तरंग घर्षित वेदिकाओं के सामने तरंग निर्मित वेदिकाएँ देखी जा सकती हैं। जैसे ही तटों के साथ अपरदन आरंभ होता है, वेलांचली प्रवाह (Longshore current) व तरंगें इस अपरदित पदार्थ को सागरीय किनारों पर *पुलिन* (Beaches) और *रोधिकाओं* के रूप में निक्षेपित करती हैं। रोधिकाएँ (Bars) जलमग्न आकृतियाँ हैं और जब यही रोधिकाएँ जल के ऊपर दिखाई देती हैं तो इन्हें *रोध* (Barriers) कहा जाता है। ऐसी रोधिकाएँ जिनका एक भाग खाड़ी के शीर्षस्थल से जुड़ा हो तो इसे *स्पिट* (Spit) कहा जाता है। जब रोधिका तथा स्पिट किसी खाड़ी के मुख पर निर्मित होकर इसके मार्ग को अवरूद्ध कर देते हैं तब *लैगून* (Lagoon) निर्मित होते हैं। कालांतर में लैगून स्थल से बहाए गए तलछट से भर जाता है और तटीय मैदान की रचना होती है।

निम्न अवसादी तट

निचले अवसादी तटों के सहारे नदियाँ तटीय मैदान एवं डेल्टा बनाकर अपनी लंबाई बढ़ा लेती हैं। कहीं-कहीं लैगून व ज्वारीय सँकरी खाड़ी के रूप में जल भराव के अतिरिक्त तटरेखा सम/चिकनी होती है। सागरोन्मुख स्थल मंद ढाल लिए होता है। तटों के साथ समुद्री पंक व दलदल पाए जाते हैं। इन तटों पर निक्षेपित स्थलाकृतियों की बहुतायत होती है।

जब मंद ढाल वाले अवसादी तटों पर तरंगें अवनमित होती हैं तो तल के अवसाद भी दोलित होते हैं और इनके परिवहन से अवरोधिकाएँ, लैगून व स्पिट निर्मित होते हैं। लैगून कालांतर में दलदल में परिवर्तित हो जाते हैं जो बाद में तटीय मैदान बनते हैं। इन निक्षेपित स्थलाकृतियों का बना रहना अवसादी पदार्थों की स्थायी एवं लगातार आपूर्ति पर निर्भर करता है। अवसादों के अतिरिक्त तूफान व सुनामी लहरें इनमें अभूतपूर्व परिवर्तन लाती हैं। बड़ी नदियाँ जो अधिक नद्यभार लाती हैं, निचले अवसादी तटों के साथ डेल्टा बनाती हैं।

हमारे देश का पश्चिमी तट ऊँचा चट्टानी निवर्तन (Retreating) तट है। पश्चिमी तट पर अपरदित आकृतियाँ बहुतायत में हैं। भारत के पूर्वी तट निचले अवसादी तट हैं। इन तटों पर निक्षेपित स्थलाकृतियाँ पाई जाती हैं। इन दोनों तटों की उत्पत्ति व प्रवृत्ति को जानने के लिए आप 'भारत-भौतिक पर्यावरण' पुस्तक पढ़ें।

उच्च चट्टानी व निम्न अवसादी तटों की प्रक्रियाओं व स्थलाकृतियों के संदर्भ में विभिन्न अंतर क्या है?

अपरदित स्थलरूप

भृगु (Cliff), वेदिकाएँ (Terraces), कंदराएँ (Caves) तथा स्टैक (Stack)

ऐसे तट जहाँ अपरदन प्रमुख प्रक्रिया है, वहाँ प्राय: दो मुख्य आकृतियाँ– तरंग घर्षित भृगु व वेदिकाएँ पाई जाती हैं। लगभग सभी समुद्र भृगु की ढाल तीव्र होती है जो कुछ मीटर से लेकर 30 मीटर या उससे अधिक हो सकती है। इनकी तलहटी पर एक मंद ढाल वाला या समतल प्लेटफार्म होता है, जो समुद्री भृगु से प्राप्त शैल मलबे से ढका होता है। अगर ये प्लेटफॉर्म तरंग की औसत ऊँचाई से अधिक ऊँचाई पर मिलते हैं तो इन्हें तरंग घर्षित वेदिकाएँ कहते हैं। भृगु की कठोर चट्टान के विरूद्ध जब तरंगें टकराती हैं तो भृगु के आधार पर रिक्त स्थान बनाती हैं और इसे गहराई तक खोखला कर देती हैं जिससे समुद्री कंदराएँ बनती हैं। इन कंदराओं की छत ध्वस्त होने से समुद्री भृगु स्थल की ओर हटते हैं। भृगु के निवर्तन से चट्टानों के कुछ अवशेष तटों पर अलग-थलग छूट जाते हैं। ऐसी अलग-थलग प्रतिरोधी चट्टानें जो कभी भृगु के भाग थे, समुद्री स्टैक कहलाते हैं। अन्य स्थलरूपों की भाँति समुद्री स्टैक भी अस्थायी आकृतियाँ हैं जो तरंग अपरदन द्वारा समुद्री पहाड़ियों व भृगु की भाँति धीरे-धीरे तंग समुद्री मैदानों में परिवर्तित हो जाती हैं और स्थल से प्रवाहित जलोढ़ से आच्छादित रेत व शिंगिल चौड़े पुलिन (Beach) में परिवर्तित हो जाते हैं।

निक्षेपित स्थलरूप

पुलिन (Beaches) और टिब्बे (Dunes)

तटों की प्रमुख विशेषता पुलिन की उपस्थिति है; यद्यपि ऊबड़-खाबड़ तटों पर भी ये टुकड़ों में पाए जाते हैं। वे अवसाद जिनसे पुलिन निर्मित होते हैं, अधिकतर थल से नदियों व सरिताओं द्वारा अथवा तरंगों के अपरदन द्वारा बहाकर लाए गए पदार्थ होते हैं। पुलिन अस्थाई स्थलाकृतियाँ हैं। कुछ रेत पुलिन (Sand beaches) जो स्थायी प्रतीत होते हैं; किसी और मौसम में स्थूल कंकड़-पत्थरों की तंग पट्टी में परिवर्तित हो जाते हैं। अधिकतर पुलिन रेत के आकार के छोटे कणों से बने होते हैं। शिंगिल पुलिन में अत्यधिक छोटी गुटिकाएँ तथा गोलाश्मिकाएँ होती हैं।

पुलिन के ठीक पीछे, पुलिन तल से उठाई गई रेत टिब्बे (Dunes) के रूप में निक्षेपित होती है। तटरेखा के समानांतर लंबाई में कटकों के रूप में बने रेत, टिब्बे निम्न तलछटी तटों पर अकसर देखे जा सकते हैं।

रोधिका (Bars), रोध (Barriers) तथा स्पिट (Spits)

समुद्री अपतट पर, तट के समांतर पाई जाने वाली रेत और शिंगिल की कटक अपतट रोधिका (Offshore bar) कहलाती है। ऐसी अपतटीय रोधिका जो रेत के अधिक निक्षेपण से ऊपर दिखाई पड़ती है उसे *रोध-रोधिका* (Barrier bar) कहते हैं। अपतटीय रोध व रोधिकाएँ प्राय: या तो खाड़ी के प्रवेश पर या नदियों के मुहानों के सम्मुख बनती हैं। कई बार इन रोधिकाओं का एक सिरा खाड़ी से जुड़ जाता है तो इन्हें *स्पिट* कहते हैं (चित्र 7.13) शीर्षस्थल से एक सिरा जुड़ने पर भी स्पिट विकसित होती है। रोधिकाएँ, रोध व स्पिट धीरे-धीरे खाड़ी के मुख पर बढ़ते रहते हैं जिससे खाड़ी का समुद्र में खुलने वाला द्वार तंग हो जाता है तथा कालांतर में खाड़ी एक लैगून में परिवर्तित हो जाती है। लैगून भी धीरे-धीरे स्थल से लाए गये तलछटों से या पुलिन से वायु द्वारा लाए गये तलछट से लैगून के स्थान पर एक चौड़े व विस्तृत तटीय मैदान में विकसित हो जाते हैं।

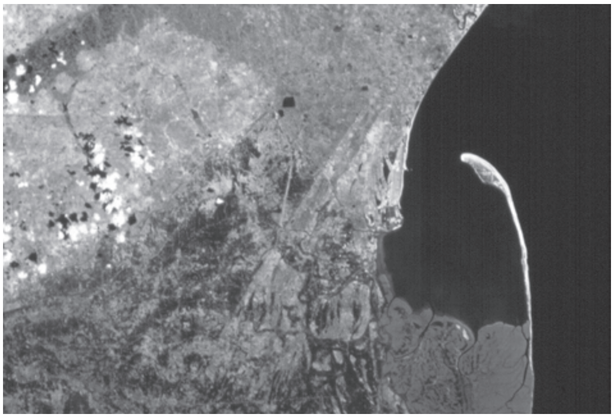

चित्र 7.13 : उपग्रहीय चित्र-गोदावरी नदी डेल्टा का स्पिट

> क्या आप जानते हैं कि समुद्र के अपतट पर बनी रोधिकाएँ तूफान और सुनामी लहरों के आक्रमण के समय सबसे पहले बचाव करती हैं क्योंकि ये रोधिकाएँ इनकी प्रबलता को कम कर देती हैं। इसके बाद रोध, पुलिन, पुलिन स्तूप तथा मैंग्रोव हैं जो इनकी प्रबलता को झेलते हैं। अतः अगर हम तटों के किनारों पर पाए जाने वाले मैंग्रोव व तलछट (Sedimentary budget) से छेड़छाड़ करते हैं तो ये तटीय स्थलाकृतियाँ अपरदित हो जाएँगी तथा मानव व मानवीय बस्तियों को तूफान व सुनामी लहरों के सीधे व प्रथम प्रहार झेलने होंगे।

पवनें (WINDS)

उष्ण मरुस्थलों के दो प्रभावशाली अनाच्छादनकर्ता कारकों में पवन एक महत्त्वपूर्ण अपरदन का कारक है। मरुस्थलीय धरातल शीघ्र गर्म और शीघ्र ठंडे हो जाते हैं। उष्ण धरातलों के ठीक ऊपर वायु गर्म हो जाती है जिससे हल्की गर्म हवा प्रक्षुब्धता के साथ ऊर्ध्वाधर गति करती है। इसके मार्ग में कोई रुकावट आने पर भँवर, वातावृत्त बनते हैं तथा अनुवात एवं उत्त्वात प्रवाह उत्पन्न होता है। पवनें मरुस्थलीय धरातल के साथ-साथ भी तीव्र गति से चलती हैं और उनके मार्ग में रूकावटें पवनों में विक्षोभ उत्पन्न करते हैं। निःसंदेह तूफानी पवन अधिक विनाशकारी होता है। पवन अपवाहन, घर्षण आदि द्वारा अपरदन करती हैं। अपवाहन में पवन धरातल से चट्टानों के छोटे कण व धूल उठाती हैं। वायु की परिवहन की प्रक्रिया में रेत व बजरी आदि औजारों की तरह धरातलीय चट्टानों पर चोट पहुँचाकर घर्षण करती हैं। जब वायु में उपस्थित रेत के कण चट्टानों के तल से टकराते हैं तो इसका प्रभाव पवन के संवेग पर निर्भर करता है। यह प्रक्रिया *बालू घर्षण* (Sand blasting) जैसी है। मरुस्थलों में पवनें कई रोचक अपरदनात्मक व निक्षेपणात्मक स्थलरूप बनाती हैं।

वास्तव में मरुस्थलों में अधिकतर स्थलाकृतियों का निर्माण बृहत् क्षरण और प्रवाहित जल की चादर बाढ़ (Sheet flood) से होता है। यद्यपि मरुस्थलों में वर्षा बहुत कम होती है, लेकिन यह अल्प समय में मूसलाधार वर्षा (Torrential) के रूप में होती है। मरुस्थलीय चट्टानें अत्यधिक वनस्पति विहीन होने के कारण तथा दैनिक तापांतर के कारण यांत्रिक व रासायनिक अपक्षय से अधिक प्रभावित होती है। अतः इनका शीघ्र क्षय होता है और वेग प्रवाह इस अपक्षय जनित मलबे को आसानी से बहा ले जाते हैं। अर्थात् मरुस्थलों में अपक्षय जनित मलबा केवल पवन द्वारा ही नहीं, वरन वर्षा व वृष्टि धोवन (Sheet wash) से भी प्रवाहित होता है। पवन केवल महीन मलबे का ही अपवाहन कर सकती हैं और बृहत् अपरदन मुख्यतः परत बाढ़ या वृष्टि धोवन से ही संपन्न होता है। मरुस्थलों में नदियाँ चौड़ी, अनियमित तथा वर्षा के बाद अल्प समय तक ही प्रवाहित होती हैं।

अपरदनात्मक स्थलरूप

पेडीमेंट (Pediment) और पदस्थली (Pediplain)

मरुस्थलों में भूदृश्य का विकास मुख्यतः पेडीमेंट का निर्माण व उसका ही विकसित रूप है। पर्वतों के पाद पर मलबे रहित अथवा मलबे सहित मंद ढाल वाले चट्टानी तल *पेडीमेंट* कहलाते हैं। पेडीमेंट का निर्माण पर्वतीय अग्रभाग के अपरदन मुख्यतः सरिता के क्षैतिज अपरदन व चादर बाढ़ दोनों के संयुक्त अपरदन से होता है।

अपरदन भूसंहति के तीव्र ढाल वाले कोर के साथ-साथ प्रारंभ होता है या विवर्तनिकी द्वारा नियंत्रित कटावों के तीव्र ढाल वाले पार्श्व पर अपरदन प्रारंभ होता है। जब एक बार एक तीव्र मंद ढाल के साथ पेडीमेंट का निर्माण हो जाता है जिसके पीछे एक भृगु या मुक्त पार्श्व होता है तो कटाव के कारण मंद ढाल तथा मुक्त पार्श्व पीछे हटने लगता है। अपरदन की इस पद्धति को

पृष्ठक्षरण (Backwasting) के द्वारा की गई ढाल की समानांतर निवर्तन (पीछे हटना) क्रिया कहते हैं। अतः समानांतर ढाल निवर्तन द्वारा पर्वतों के अग्रभाग को अपरदित करते हुए पेडीमेंट आगे बढ़ते हैं तथा पर्वत घिसते हुए पीछे हटते हैं और धीरे-धीरे पर्वतों का अपरदन हो जाता है और केवल *इंसेलबर्ग* (Inselberg) निर्मित होते हैं जो कि पर्वतों के अवशिष्ट रूप हैं। इस प्रकार मरुस्थलीय प्रदेशों में एक उच्च धरातल, आकृति विहीन, मैदान में परिवर्तित हो जाता है जिसे *पेडीप्लेन/पदस्थली* कहते हैं।

प्लाया (Playa)

मरुभूमियों में मैदान (Plains) प्रमुख स्थलरूप हैं। पर्वतों व पहाड़ियों से घिरे बेसिनों में अपवाह मुख्यत: बेसिन के मध्य में होता है तथा बेसिन के किनारों से लगातार लाए हुए अवसाद जमाव के कारण बेसिन के मध्य में लगभग समतल मैदान की रचना हो जाती है। पर्याप्त जल उपलब्ध होने पर यह मैदान उथले जल क्षेत्र में परिवर्तित हो जाता है। इस प्रकार की उथली जल झीलें ही *प्लाया* (Playa) कहलाती हैं। प्लाया में वाष्पीकरण के कारण जल अल्प समय के लिए ही रहता है और अकसर प्लाया में लवणों के समृद्ध निक्षेप पाए जाते हैं। ऐसे प्लाया मैदान, जो लवणों से भरें हों, **कल्लर भूमि या क्षारीय क्षेत्र (Alkali flats)** कहलाते हैं।

अपवाहन गर्त (Deflation hollows) तथा गुहा (Caves)

पवनों के एक ही दिशा में स्थायी प्रवाह से चट्टानों के अपक्षय जनित पदार्थ या असंगठित मिट्टी का अपवाहन होता है। इस प्रक्रिया में उथले गर्त बनते हैं जिन्हें *अपवाहन गर्त* कहते हैं। अपवाहन प्रक्रिया से चट्टानी धरातल पर छोटे गड्ढे या गुहिकाएँ भी बनती हैं। तीव्र वेग पवन के साथ उड़ने वाले धूल कण अपघर्षण से चट्टानी तल पर पहले उथले गर्त जिन्हें **वात-गर्त** (blowouts) कहते हैं; बनाते हैं और इनमें से कुछ वात-गर्त गहरे और विस्तृत हो जाते है, जिन्हें *गुहा* (Caves) कहते हैं।

छत्रक (Mushroom), टेबल तथा पीठिका शैल

मरुस्थलों में अधिकतर चट्टानें पवन अपवाहन व अपघर्षण द्वारा शीघ्रता से कट जाती हैं और कुछ प्रतिरोधी चट्टानों के घिसे हुए अवशेष जिनके आधार पतले व ऊपरी भाग विस्तृत और गोल, टोपी के आकार के होते है, छत्रक के आकार में पाए जाते हैं। कभी-कभी प्रतिरोधी चट्टानों का ऊपरी हिस्सा मेज की भाँति विस्तृत होता है और अधिकतर ऐसे अवशेष पीठिका की भाँति खड़े रहते हैं।

> बाढ़ चादर व पवन के द्वारा बनाए गए अपरदनात्मक स्थलरूपों को वर्णित करें।

निक्षेपित स्थलरूप

पवन एक छँटाई करने वाला कारक (Sorting agent) भी है, अर्थात पवन द्वारा बारीक रेत का परिवहन अधिक ऊँचाई व अधिक दूरी तक होता है। पवनों के वेग के अनुरूप मोटे आकार के कण धरातल के साथ घर्षण करते हुए चले आते हैं और अपने टकराने से अन्य कणों को ढीला कर देते हैं, जिसे साल्टेशन कहते हैं। हवा में लटकते महीन कण अपेक्षाकृत अधिक दूरी तक उड़ा कर ले जाए जा सकते हैं। चूँकि, पवनों द्वारा कणों का परिवहन उनके आकार व भार के अनुरूप होता है, अत: पवनों की परिवहन प्रक्रिया में ही पदार्थों छँटाई का काम हो जाता है। जब पवन की गति घट जाती है या लगभग रुक जाती है तो कणों के आकार के आधार पर निक्षेपण प्रक्रिया आरंभ होती है। अत: पवन के निक्षेपित स्थलरूपों में कणों की महीनता भी देखी जा सकती है। रेत की आपूर्ति व स्थायी पवन दिशा के आधार पर शुष्क प्रदेशों में पवन निक्षेपित स्थलरूप विकसित होते हैं।

बालू-टिब्बे (Sand dunes)

उष्ण शुष्क मरुस्थल बालू-टिब्बों के निर्माण के उपयुक्त स्थान हैं। इनके निर्माण के लिए अवरोध का होना भी अत्यंत आवश्यक है। बालू-टिब्बे विभिन्न प्रकार के होते हैं (चित्र 7.14)।

नव चंद्राकार टिब्बे जिनकी भुजाएँ पवनों की दिशा में निकली होते हैं; **बरखान** कहलाते हैं। जहाँ रेतीले धरातल पर आंशिक रूप से वनस्पति भी पाई जाती हैं वहाँ **परवलयिक** (Parabolic) बालुका-टिब्बों का निर्माण होता है, अर्थात् अगर पवनों की दिशा स्थायी रहे तो परवलयिक बालू-टिब्बे बरखान से भिन्न आकृति वाले होते हैं; सीफ़ (Seif) बरखान की ही भांति होते

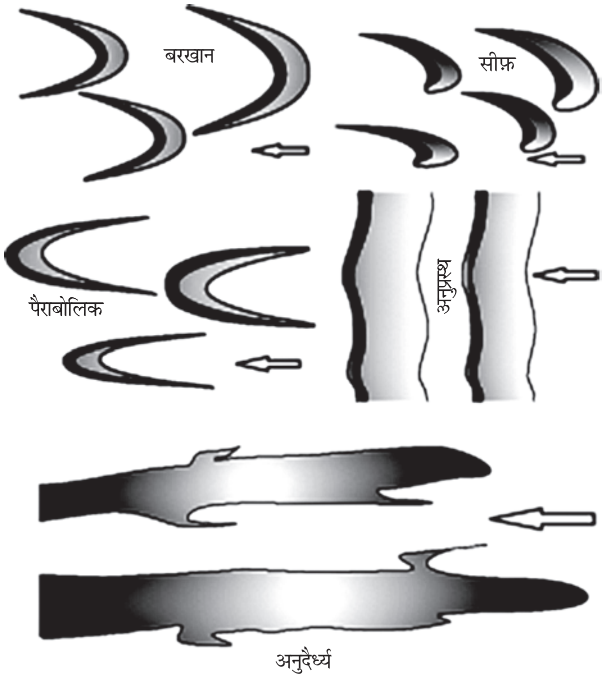

चित्र 7.14 : बालू-टिब्बों के विभिन्न रूप। तीर द्वारा वायु दिशा का चित्रण

हैं। सीफ बालू-टिब्बों में केवल एक ही भुजा होती है। ऐसा पवनों की दिशा में बदलाव के कारण होता है। सीफ की यह भुजा ऊँची व अधिक लंबाई में विकसित हो सकती है। जब रेत की आपूर्ति कम तथा पवनों की दिशा स्थायी रहे तो अनुदैर्ध्य टिब्बे (Longitudinal dunes) बनते हैं। ये अत्यधिक लंबाई व कम ऊँचाई के लम्बायमान कटक प्रतीत होते हैं। अनुप्रस्थ टिब्बे (Transverse dunes) प्रचलित पवनों की दिशा के समकोण पर बनते हैं। इन टिब्बों के निर्माण में पवनों की दिशा निश्चित और रेत का स्रोत पवनों की दिशा के समकोण पर हों। ये अधिक लंबे व कम ऊँचाई वाले होते हैं। जब रेत की आपूर्ति अधिक हो तो अधिकतर नियमित बालु-टिब्बे एक-दूसरे में विलीन हो जाते हैं और उनकी वास्तविक आकृति व अनोखी विशेषताएँ नहीं रहतीं। मरुस्थलों में अधिकतर टिब्बों का स्थानांतरण होता रहता है और इनमें से कुछ विशेषकर मानव बस्तियों के निकट स्थित हो जाते हैं।

अभ्यास

1. **बहुवैकल्पिक प्रश्न :**

(i) स्थलरूप विकास की किस अवस्था में अधोमुख कटाव प्रमुख होता है?
(क) तरुणावस्था (ख) प्रथम प्रौढ़ावस्था
(ग) अंतिम प्रौढ़ावस्था (घ) वृद्धावस्था

(ii) एक गहरी घाटी जिसकी विशेषता सीढ़ीनुमा खड़े ढाल होते हैं; किस नाम से जानी जाती है :
(क) U आकार घाटी (ख)अंधी घाटी
(ग) गॉर्ज (घ) कैनियन

(iii) निम्न में से किन प्रदेशों में रासायनिक अपक्षय प्रक्रिया यांत्रिक अपक्षय प्रक्रिया की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली होती है :
(क) आर्द्र प्रदेश (ख) शुष्क प्रदेश
(ग) चूना-पत्थर प्रदेश (घ) हिमनद प्रदेश

(iv) निम्न में से कौन सा वक्तव्य लेपीज (Lapies) शब्द को परिभाषित करता है :
(क) छोटे से मध्यम आकार के उथले गर्त
(ख) ऐसे स्थलरूप जिनके ऊपरी मुख वृत्ताकार व नीचे से कीप के आकार के होते हैं।
(ग) ऐसे स्थलरूप जो धरातल से जल के टपकने से बनते हैं।
(घ) अनियमित धरातल जिनके तीखे कटक व खाँच हों।

(v) गहरे, लंबे व विस्तृत गर्त या बेसिन जिनके शीर्ष दीवार खड़े ढाल वाले व किनारे खड़े व अवतल होते हैं, उन्हें क्या कहते हैं?

(क) सर्क (ख) पार्श्विक हिमोढ़

(ग) घाटी हिमनद (घ) एस्कर

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 30 शब्दों में दीजिए :

(i) चट्टानों में अध:कर्तित विसर्प और मैदानी भागों में जलोढ़ के सामान्य विसर्प क्या बताते हैं?

(ii) घाटी रंध्र अथवा युवाला का विकास कैसे होता है?

(iii) चूनायुक्त चट्टानी प्रदेशों में धरातलीय जल प्रवाह की अपेक्षा भौम जल प्रवाह अधिक पाया जाता है, क्यों?

(iv) हिमनद घाटियों में कई रैखिक निक्षेपण स्थलरूप मिलते हैं। इनकी अवस्थिति व नाम बताएँ।

(v) मरुस्थली क्षेत्रों में पवन कैसे अपना कार्य करती है? क्या मरुस्थलों में यही एक कारक अपरदित स्थलरूपों का निर्माण करता है।

3. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 150 शब्दों में दीजिए :

(i) आर्द्र व शुष्क जलवायु प्रदेशों में प्रवाहित जल ही सबसे महत्त्वपूर्ण भू-आकृतिक कारक है। विस्तार से वर्णन करें।

(ii) चूना चट्टानें आर्द्र व शुष्क जलवायु में भिन्न व्यवहार करती हैं क्यों? चूना प्रदेशों में प्रमुख व मुख्य भू-आकृतिक प्रक्रिया कौन सी हैं और इसके क्या परिणाम हैं?

(iii) हिमनद ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों को निम्न पहाड़ियों व मैदानों में कैसे परिवर्तित करते हैं या किस प्रक्रिया से यह कार्य सम्पन्न होता है बताएँ?

परियोजना कार्य

अपने क्षेत्र के आसपास के स्थलरूप, उनके पदार्थ तथा वह जिन प्रक्रियाओं से निर्मित है, पहचानें।